चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र

कहते हैं कि किसी जमाने में एक बड़ी ही सुन्दर लड़की थी। वह सूत निकालना और बनाना बहुत अच्छी तरह जानती थी। उसका निकाला हुआ सूत बहुत महीन होता था। सवेरे की हल्की धूप में जो सतरंगी किरणें छिपी रहती हैं उनसे भी महीन था वह सूत और कोमल इतना था की शिरिस फुल भी उसकी बराबरी न कर सकता था।

और वह बुनती कितना सुन्दर थी ! उसका निकाला हुआ सूत दुनिया भर में मशहूर था। सच पूछा जाए तो उस जमाने में कोई भी उसकी तरह ना सूत निकाल सकता था और ना बुन सकता था।

जब वह करघे पर बुनने बैठती तो उसकी शोभा का क्या कहना ! दूर-दूर के देशों से लोग उसका बुना देखने आते थे। उसके बुने हुए कपड़ों पर ऐसे सुन्दर -सुन्दर बेल-बूटे कड़े रहते कि देखने वाले दङ्ग रह जाते। जब वह कपड़ों पर बेल-बूटे और फल-फूल कढ़ती तो तितलियाँ उनको देख भ्रम में पड़ जातीं और उन कपड़ों पर आकर बैठ जातीं। लोग खड़े-खड़े देखते और कहते - "वाह ! भई ! वाह ! क्या अच्छा बुनती है ! यह जरूर कोई देवी है जिसने किसी श्राप के कारण धरती पर जन्म लिया है।

उसके बुने हुए कपड़ों की ऐसी धूम थी कि महारानियाँ भी उसके घर आतीं और कपड़ा करघे पर से उतरने के पहले ही खरीद ले जातीं। उसके दरवाजे पर हमेशा ग्राहकों की भीड़ लगी रहती थी।

इस तरह उस लड़की को बहुत धन मिलने लगा। कुछ ही दिनों में वह बड़ी अमीर बन गई। लेकिन ज्यों - ज्यों धन बढ़ता गया त्यों- त्यों उसका घमण्ड भी।

एक दिन एक पड़ोसन उसका कपड़ा बुनना देखने आई और उसकी चतुरता देख

वह चकित होकर बोली-"बिटिया! तुम्हारा बुना हुआ यह कपड़ा साँप की केञ्चुली से भी महीन है। यह कपड़ा देखने से तो ऐसा मालूम होता है मानो देवी सरस्वती ने खुद तुम्हें बुनना सिखा दिया है। नहीं तो क्या कोई ऐसा कपड़ा बन सकता है?"

और कोई होती तो यह तारीफ सुनकर फूली न समाती। लेकिन यह बातें उस घमण्डिन को क्यों सुहाती। उसने मुँह बनाकर कहा -"देवी सरस्वती क्या सिखाएगी मुझे।? सीखने के लिए पहले उसे कुछ आता भी है ? मुझे कोई क्या सिखाएगा ? मैं ही सभी को सिखा सकती हूँ। "

उस लड़की के पिता ने, जो वहीं बैठे थे, समझा कर कहा-"बेटी, ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए। कहीं देवी को क्रोध आ गया तो फिर तुझे क्या करते बनेगा ?

लेकिन उसे घमण्डिन ने और भी अकड़ कर कहा -"पिताजी ! आप भी ऐसा क्यों कहते हैं ? अगर सरस्वती यहाँ होती और मुझसे बुनने में होड़ लगती, तो फिर पता चल जाता है कि कौन किस से बढ़कर है। "

इतने में एक बुढ़िया वहाँ आई और बोली -"रानी बिटिया , हो सकता है कि तुम बुनने में सबसे बढ़ गई हो। लेकिन सारे संसार को ज्ञान देने वाली सरस्वती से होड़ करना उचित नहीं है। विद्या के साथ-साथ विनम्रता भी सीखनी चाहिए। घमण्ड से ही मनुष्य का पतन होता है। इसलिए अच्छा हो, अभी तुम अपनी गलती समझ कर उनसे क्षमा माँग लो। "

बुढ़िया की यह बातें सुनते ही मानो उस लड़की के क्रोध की आग में घी पड़ गया और उसने तमक कर कहा -"जा ! जा! बड़ा उपदेश देने आई है ! तुम क्या जानती हो कि मैं कैसा बुनती हूँ ? अगर वह सरस्वती

वहाँ होती तो फिर मैं दिखा देती कि बुनना किसे कहते हैं। "

इतना सुनते ही बुढ़िया गायब हो गई और सरस्वती देवी खुद वहाँ आ खड़ी हुई। वहाँ जितने लोग थे, सब डर के मारे थरथराने लगे कि अब क्या होने वाला है। वह लोग जानते थे कि सचमुच यह लड़की बहुत अच्छा बुनती है। संसार में कोई उसकी तरह नहीं बुन सकता। पर उन्हें यह भी मालूम था कि वह बड़ी घमण्डी है। वह बड़े दुखी थे कि यह लड़की देवी से दुश्मनी करके अपने पैरों पर आप ही कुल्हाड़ी चला रही है। देवी को देखकर भी वह लड़की बिल्कुल नहीं घबराई।

वह बड़ी ऍंठ के साथ बोली -"तो आप ही हैं सरस्वती देवी। चलिए तो, जरा देखा जाए कि हम दोनों में कौन अच्छा बुनती है। "

वहीँ दो करघे पड़े थे। दोनों ने अपना-अपना करघा चुन लिया और बुनने लगी। सब लोग मिट्टी की मूरतों की तरह उनको बुनते देखते रहे। वह देखना चाहते थे कि

इस होड़ का क्या नतीजा निकलता है। थोड़ी देर में दोनों ने दो थान बुन लिए।

देवी ने जो कपड़ा बुना, उस पर सुन्दर दिव्य रङ्ग -बिरङ्गे चित्र थे। उन चित्रों में सबके मुँह पर हँसी खेल रही थी। उन चित्रों को देखते ही मन प्रसन्न हो जाता था।

उस लड़की ने जो कपड़ा बना था, उस पर भी चित्र थे। वह रङ्ग -बिरङ्गे तो थे, लेकिन उनमें सबके मुँह विचके हुए थे उन पर क्रोध और द्वेष की रेखा पड़ी हुई थी। उस लड़की का क्रोध और द्वेष उन चित्रों में भी उतर आया था। उन चित्रों को देखते ही सबने मुँह फेर लिया और उस लड़की को लाचार होकर हार माननी पड़ी।

देवी ने कहा -"लड़की ! तुम बनाती बहुत अच्छी हो, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन तुम देवताओं से होड़ नहीं कर सकती। अगर तुम विद्या के साथ-साथ विनम्रता भी सीख लेती तो आज यह नौबत न आती। लेकिन तुम्हारा घमण्ड का कोई ठिकाना न रहा। अब तुम्हें इसका फल भुगतना होगा। मैं तुम्हें ऐसा श्राप देता हूँ जिससे तुम्हें जीवन भर बुनने के सिवा और कोई काम ना रहे और लोग तुम्हारा बुना देखकर अचरज करें। जाओ, यही तुम्हारी सजा होगी। " यह श्राप देकर देवी ओझल हो गई।

देवी का श्राप लगते ही उस लड़की की काया पलट गई। वह एक सुन्दर लड़की का रूप छोड़कर एक नन्हा सा कीड़ा बन गई। उस दिन से लोग उसे मकड़ी कह कर पुकारने लगे।

अब वह और क्या कर सकती थी? लजा कर एक अन्धेरे कोने में जा छिपी और वही झीने नाजुक तारों से सुन्दर जाल बुनने लगी।
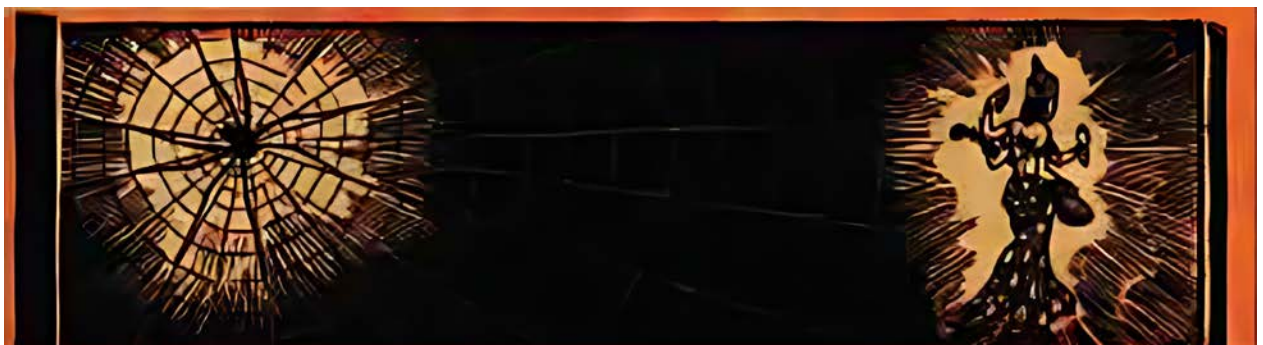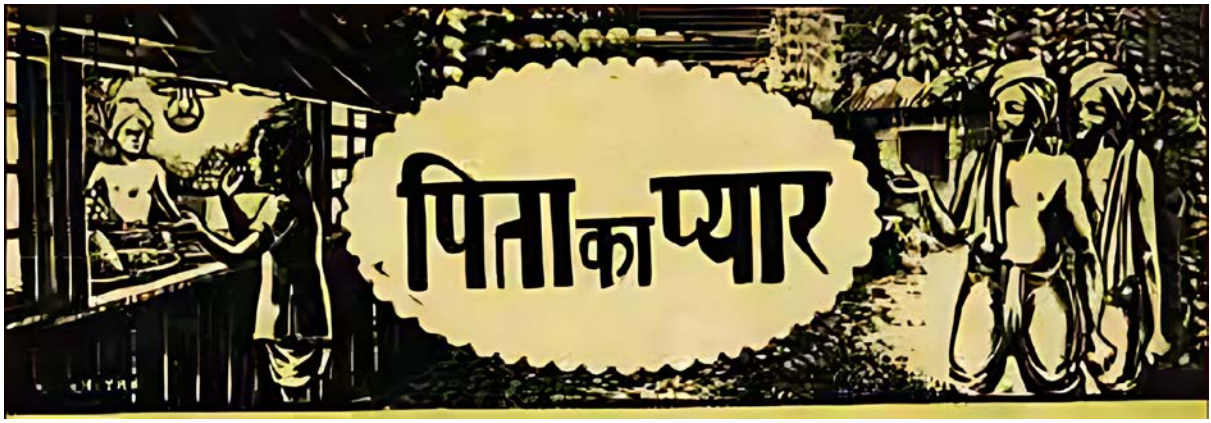
पुराने ज़माने की बात है। एक गाँव में धर्मपाल नाम का एक व्यापारी रहता था। उसके जैसा धर्मात्मा और बात का सच्चा आदमी मिलना मुश्किल था। दीन दुखियों की सहायता करने में उसे बढ़ा-चढ़ा और कोई न था। सचमुच जैसा उसका नाम था वैसा ही उसका काम भी। इसलिए उस गाँव के ही नहीं बल्कि आसपास के गाँव के लोग भी उसकी बड़ी इज्जत करते थे। बदमाश चोर और डाकू भी उसका नाम सुनते ही आदर से सिर झुका लेते थे।

पहले धर्मपाल के कोई सन्तान न थी। मुद्दत के बाद जब उस को एक लड़का हुआ तो उसने उसका नाम राजपाल रखा। इकलौता बेटा था, इसलिए धर्मपाल ने उसे बड़े लाड़ प्यार से पाला।

यह राजपाल बड़ा शरारती निकला। उसका पिता जितना शरीफ था वह उतना ही बदमाश साबित हुआ। ज्यों -ज्यों उसकी उम्र बढ़ती गई, त्यों-त्यों उसकी दुष्टता भी। हर साल वह कुछ ना कुछ बुरी बातें सिखाता जाता था। उसके पिता ने उसको बहुत कुछ समझाया-बुझाया, लेकिन उसने उनकी बातों पर कोई ध्यान न दिया। उसके पिता अमीर आदमी थे, इसलिए उसे रूपए पैसे की कमी न थी। बस यह रुपया पानी की तरह बहने लगा। जहाँ रूपए पैसे की कमी न हो, वहाँ यार दोस्तों की क्या कमी ?जिस तरह गुड़ की गन्ध पाते ही चींटियाँ जमा हो जाते हैं, उसी तरह पैसे वालों के पास यार दोस्त भी अपना अड्डा जमा लेते हैं। इन यार लोगों ने राजपाल को दुनिया भर की बुरी रातें लगा दी। वह निधड़क शराब पीने लगा। रात रात भर जुआ खेलता था। धीरे-धीरे उसकी तन्दुरुस्ती बिगड़ने लगी। उसका चेहरा पीला पड़ने लगा और वह दिन-दिन दुबला हो चला।

जी. परमेश्वर राव

उसके पिता उसकी यह हालत देखकर बड़े परेशान हुए। उन्होंने उसे अब तक कई बार समझाया-बुझाया था, लेकिन कभी जोर से डाँटा- डपटा न था। वह सोचते थे -लड़का है, आगे चलकर खुद सुधर जाएगा। पर जब उसके सुधरने का कोई लक्षण न दिखाई पड़ा और जब उसकी तन्दुरूस्ती तेजी से बिगड़ने लगी, तब वह चुप न रह सके। एक दिन उन्होंने उसे अपने पास बुलाया और खूब खरी-खोटी सुनाई। लेकिन राजपाल ने उनकी झिड़कियों की कोई परवाह न की। वह अपनी हरकतों से बाज न आया। तब लाचार होकर उसके पिता ने रूपए पैसे मिलने का रास्ता बन्द कर दिया।उन्होंने ऐसा इन्तज़ाम किया जिससे एक कानी-कोड़ी भी उसके हाथ ना लगे। अब राजपाल के दिन बड़ी मुश्किल से कटने लगे। जब यारों ने देखा कि उसके पास रुपए पैसे नहीं है तो वह उससे कतरने लगे। यहाँ तक कि कुछ ही दिनों में राजपाल को उसके सब दोस्तों ने छोड़ दिया। वह बिल्कुल अकेला पड़ गया। जब बाजार से घूम फिर कर घर आता तो पिता की झिड़कियाँ सुनाई पड़ती। आखिर इसका जीना दूभर हो गया। एक रात सब की आँख बचाकर वह घर से भाग निकला ।

सवेरे जब धर्मपाल उठा तो देखा क्या है कि लड़का लापता है। वह बहुत दुखी हुआ। उसके हृदय को बहुत चोट पहुँची। फिर भी पिता का प्यार कैसे छूटता ? उसने अपने नौकरों को बुलाया और उन्हें बहुत सा रुपया देकर कहा -"देखो, राजपाल घर से भाग गया है। तुम लोग उसका पता लगा कर चुपचाप उसके पीछे हो जाओ। तुम देखते रहो कि उसको किसी की किसी चीज की कमी या किसी तरह की तकलीफ न हो। नौकरों ने राजपाल का पता लगा लिया और वह उसके पीछे हो लिए। राजपाल चलते

चलते एक गाँव में पहुँचा, उसे बड़े जोर की भूख लगी हुई थी। लेकिन पास एक कानी-कोड़ी भी न थी। जेबें बिल्कुल खाली थी। अब वह क्या करें? उसके सामने ही मिठाई की एक दुकान थी। मिठाइयाँ देखकर उसके मुँह में पानी भर आया। उसने जाकर दुकानदार से पूछा -"क्यों भाई ! क्या थोड़ी सी मिठाई मुझे दोगे ?"

"हा, हां ! दूँगा क्यों नहीं। आओ, जितनी चाहिए खा लो। " दुकानदार ने कहा।

पर मेरे पास तो एक कानी-कौड़ी भी नहीं। राजपाल ने जवाब दिया।

"कुछ परवाह नहीं। पैसे तुमसे माँगता कौन है ? " यह कहकर दुकानदार ने बड़े प्रेम से सभी मिठाईयाँ दी। राजपाल ने भरपेट मिठाई खाई। फिर दुकानदार को धन्यवाद देकर चलता बना। असल में वह दुकान धर्मपाल के नौकरों की थी। उन्होंने जब देखा कि राजपाल भूख से बेहाल है , तो उन्होंने सामने ही एक मिठाई की दुकान खोल दी।

दोपहर होते-होते राजपाल एक नदी के किनारे पहुँचा। नदी लबालब भरी हुई थी। राजपाल ये
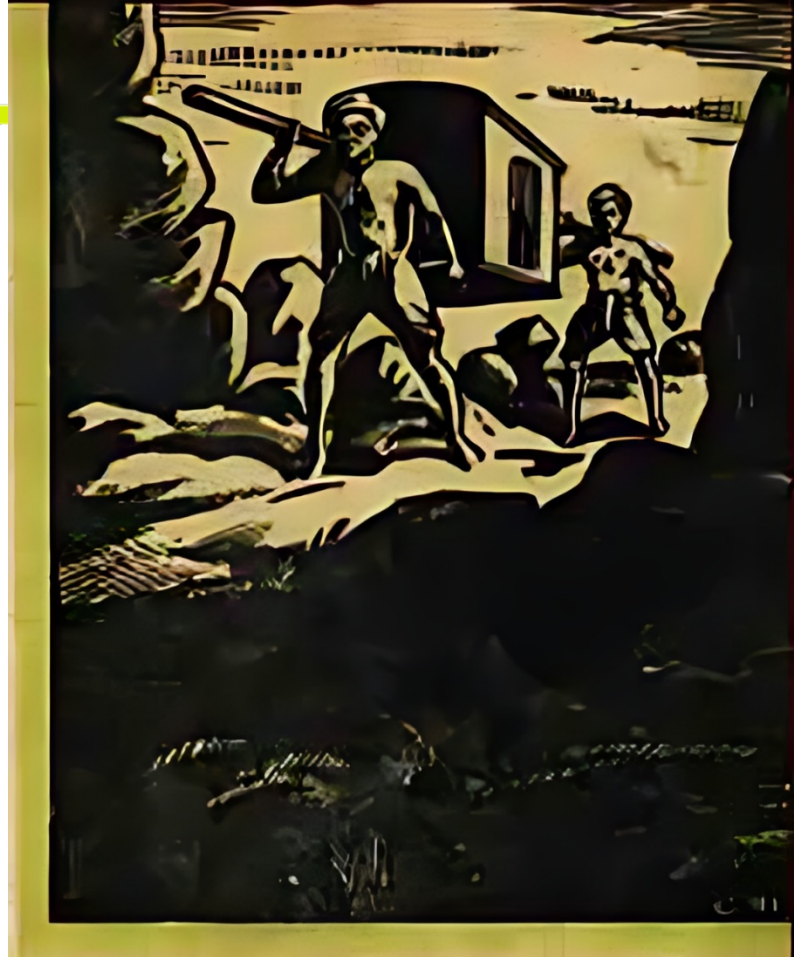
नदी पार होना चाहता था। लेकिन पार हो तो कैसे ? इतने में उस पार से एक नाव आ गई। नाव के मल्लाहों होने राजपाल को देखकर कहा -"आओ, हम तुम्हें पार उतार दें। "

"पर मेरे पास तो फूटी-कौड़ी भी नहीं है" राजपाल ने कहा।

"कोई हर्ज नहीं। हम तुमसे पैसा नहीं माँगते।" उन्होंने कहा और राजपाल को पार उतार दिया। राजपाल ने उनको धन्यवाद किया और अपनी राह ली। यह मल्लाह भी धर्मपाल के नौकर ही थे। जब उन्होंने देखा कि राजपाल को नदी पार

करनी होगी तो उन्होंने एक नाव किराए पर ले ली और राजपाल को पार उतार दिया।

शाम होते-होते राजपाल एक पहाड़ी के पास पहुँचा और धीरे-धीरे उस पर चढ़ने लगा। थोड़ी देर के बाद चढ़ते चढ़ते वह बहुत थक गया और जब आगे ना चढा गया तो एक चट्टान पर बैठ गया। इतने में धर्मपाल के नौकर, जो उसके पीछे-पीछे आ रहे थे, एक डोली लेकर आए और बोले -" बाबूजी, अगर आप बहुत थक गए हों , तो आइए , इस डोली में बैठ जाइए। हम आपके ऊपर पहुँचा देंगे। राजपाल ने फिर बताया कि वह कुछ पैसे ना दे सकेगा। लेकिन डोली वालों ने इस बात की कुछ परवाह न की और उसे डोली पर चढ़ा लिया।

इस तरह कुछ दिनों तक धर्मपाल के नौकर राजपाल के पीछे लग रहे और हमेशा उसकी मदद करते रहे। आखिर राजपाल को शक हुआ कि यह लोग कौन है जो कदम-कदम पर आकर मेरी मदद करते हैं। जरूर इसमें कोई ना कोई रहस्य है। यह सोचकर उसने एक बार अपनी मदद करने वालों से पूछा -"आप लोग कौन है और क्यों बार-बार मेरी मदद करते हैं ?" तब नौकरों ने कहा -"हम लोग आपके पिताजी के नौकर हैं आपको परदेश में कोई तकलीफ ना हो, इस ख्याल से उन्होंने हमें आपके पीछे भेज दिया है। "

नौकरों की यह बातें सुनते ही राजपाल बहुत पछताया। उसे बड़ा अफसोस हुआ और उसने अब अपनी चाल चलन सुधारने का दृढ़-निश्चय कर लिया। वह नौकरों के साथ-साथ तुरन्त घर लौटा। घर पहुँचते ही वह पिता के पैरों पड़ गया और माफी माँगी। उसने कहा -"पिताजी, मुझे माफ कीजिए। आज तक मैंने बहुत शरारत की है। अब आगे से मैं आपका सच्चा सपूत बनूँगा।"

अपने इकलौते बेटे को राह पर आते देख धर्मपाल भी फूले ना समाए। उन्होंने उसे उठाकर बड़े प्रेम से गले लगा लिया।

बङ्गाल में श्री गौराङ्ग नाम के एक बड़े भक्त हुए हैं। वह भक्त ही नहीं बल्कि बड़े भारी पण्डित भी थे। तर्कशास्त्र में उनकी बराबरी करने वाला कोई न था।

एक दिन श्री गौराङ्ग किसी काम पर पड़ोस की एक गाँव की ओर जा रहे थे। बीच में एक नदी पड़ती थी। गौराङ्ग एक नाव पर चढ़ गए और नदी पार करने लगे। नाव पानी को चीरती हुई धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगी। वहाँ का दृश्य बड़ा मनोहर था। नदी के दोनों किनारो पर घने पेड़ों की कतारें खड़ी थी। दूर से पहाड़ों की चोटियाँ दिखाई देती थी। चारों ओर हरियाली छाई हुई थी। नदी का पानी आईने सा साफ था और उसमें किनारे के पेड़ों की परछाई दिख पड़ती थी। गौराङ्ग इस दृश्य को देख कर तन्मय हो गए। उनकी खुशी का ठिकाना न रहा और वह बाहरी दुनिया को भूल गए।

इस हालत में किसी ने गौराङ्ग की पीठ थपथपा कर उन्हें जगाया। गौराङ्ग चौक पर चारों ओर देखने लगे। नाव पर चढ़ते वक्त वे अपने विचारों में डूबे हुए थे। इसलिए उन्होंने और किसी ओर ध्यान नहीं दिया था। अब जब उन्होंने पीछे फिर कर देखा तो उन्हें अपने बचपन का साथी और सहपाठी गदाधर दिखाई दिया। उन्होंने कहा-"अरे !गदाधर ! तू यहाँ कैसे ? गुरु जी का आश्रम छोड़ने के बाद यह हमारी पहली मुलाकात है। भाई , तुम्हें देखकर तो मैं फूला नहीं समाता।

दोनों मित्र बचपन की बातें याद करते-करते अपनी सुध-बुध भूल गए।

"अच्छा, तुम्हें याद है तुमने गुरुजी से क्या वादा किया था ? तुमने कहा था कि मैं एक ऐसा तर्कशास्त्र लिखूँगा जिसे देखकर सारा संसार दाँतों तले ऊँगली दबा लगा।"

सुशीला देवी

"क्यों ? बोलो, याद है ना ?" गदाधर ने पूछा।

"हाँ, याद है और मैंने अपना वादा पूरा भी किया है। लो, यह देखो। तुम इसे पढ़ कर बहुत खुश हो जाओगे।" यह कहते हुए गौराङ्ग ने एक पुस्तक गदाधर के हाथ में दे दी। गदाधर वह पुस्तक खोलकर बड़े उत्साह के साथ पढ़ने लगा। पहले उसके मुँह पर आश्चर्य के चिन्ह दिखाई दिए। लेकिन पीछे उस पर उदासी झलकने लगी। थोड़ी देर के बाद वह आगे न पढ़ सका। उसने किताब बन्द करके गौराङ्ग को लौटा दी। उसके मुँह से कोई बात न निकली।

"यह क्या गदाधर ! यह उदासी कैसी ? इसमें ऐसी कौन सी बात है जिससे तुम्हें इतना दुख पहुँचा है ? मैं तो तुम्हारा मित्र हूँ। अगर कोई बात हो तो तुम मुझसे कह सकते हो न !" गौराङ्ग ने पूछा ।

गदाधर ने कोई जवाब न दिया। उल्टे उसकी आँखों से आंसू बहने लगे। वह चुपचाप मुँह फेर कर आँसू पोंछने लगा, पर उसके आँसू नहीं रुके।

"लाखों किताबें पढ़ने और सैकड़ो किताबें लिखने से क्या फायदा है जबकि मैं एक मित्र का दुख दूर नहीं कर सकता। हम बचपन में कितने सुखी थे। एक दूसरे को देखने से उस समय हमें कितनी खुशी होती थी। क्या हम आज भी उसी तरह सुखी नहीं हो सकते ? बोलो, क्या तुम मुझे अपने दिल की बात न बतलाओगे ?" गौराङ्ग ने पूछा।

आखिर गदाधर चुप न रह सका। उसने कहा -"क्या कहूँ, गौराङ्ग, में कौन सा मुँह लेकर यह बात सुनाऊँ? तो भी सुनो। मैं ने भी जीवन भर तपस्या करके तर्कशास्त्र पर एक पुस्तक लिखी है। लेकिन आज तुम्हारी किताब पढ़ने के बाद मुझे पता चला कि

मेरी लिखी किताब किसी काम की नहीं है है। अब मैं सोचता हूँ कि मेरी सारी मेहनत बेकार गई। ऐसी पुस्तक न मैं अब तक लिख सका और न आगे कभी लिख ही सकूँगा। गदाधर एक ठण्डी साँस भरकर चुप हो गया।

इतने में काले काले बादल घिर आए। ऐसा मालूम होता था कि थोड़ी देर में जोर से पानी बरसने लगेगा। इन दोनों मित्रों के हृदय में भी तूफान चल रहा था। वह पानी की ओर देखते चुपचाप बैठे रहे।

इधर गौराङ्ग मन ही मन सोच रहा था कि गदाधर का दुख क्यों कर दूर किया जाए। उसे कोई उपाय न सूझ रहा था। वह पुस्तक अपनी जाँघ पर रखे थोड़ी देर तक यों ही सोचता रहा। न जाने उसे अचानक क्या सूझा कि उसने किताब उठाकर नदी में फेंक दी।

गदाधर चिल्लाया-"गौराङ्ग, यह तुमने क्या किया ? क्या तुमने समझा कि इससे मेरी उदासी दूर हो जाएगी और मुझे खुशी होगी ? तुम्हारे इस त्याग से तुम्हारा यश तो अमर हो गया। लेकिन मेरे मुँह पर कालिख पुत गई। सचमुच मुझे

तुम्हारी पुस्तक देखकर तुमसे ईर्ष्या हुई थी ,लेकिन पल भर के लिए। क्या इतनी सी बात के लिए तुमने संसार को एक अमूल्य पुस्तक से वञ्चित कर दिया ? मैंने सोचा था कि मैं अपनी पुस्तक गङ्गा में बहा दूँगा। पर तुमने खुद ही यह काम किया है। तुमने यह क्या किया ? अब हाथ मलमल कर पछताने से भी क्या होगा ?" इस तरह वह बहुत शोक करने लगा। पर उस समय गौराङ्ग के मुख पर एक दिव्य ज्योति खेल रही थी। उसने कहा-"गदाधर ! तुम कुछ भी सोच न करो। हम दोनों गुरु भाई हैं। इसलिए

पुस्तक चाहे मैं लिखूँ या तुम दोनों एक ही है। मैं चाहता हूँ कि संसार में तुम्हारी किताब मशहूर हो जाए। पण्डित लोग उसे पढ़े और तुम्हारा नाम सब जगह फैल जाए। फिर तुम बेकार क्यों सोच करते हो ? इसके अलावा जब मैं अपनी किताब लिख रहा था तो मेरे मन में सवाल उठा कि मैं यह किताब क्यों लिख रहा हूँ। मैं आज तक उस सवाल का जवाब ढूँढता ही रहा। यह पुस्तक नदी में फेंक कर मैं सिर्फ तुमको ही नहीं बल्कि अपने आप को भी खुश करना चाहता था। उस किताब को पानी में फेंक कर मैं ने अपने अहङ्कार का नाश कर दिया। अहङ्कार का नाश करने में ऐसी लाखों किताबें नष्ट हो जाए तो भी कोई हर्ज नहीं।"

"गदाधर ! तुम फिर एक बार हँस दो। मैं अपनी आंखों से एक बार फिर तुम्हारी हँसी देख लूँ। वही मेरे लिए सबसे बड़ा सुख होगा।

अब फिर दोनों के हृदय से दुख की परछाई दूर हो गई और आनन्द का प्रकाश छा गया। दोनों फिर पानी में देखते हुए चुपचाप बैठे रहे। पर फर्क यह था कि इस बार दोनों मित्र एक दूसरे के कन्धे पर हाथ रखकर प्रेम के साथ बैठे हुए थे। गौराङ्ग ने कहा- "इस संसार में सब लोग सुखी और सन्तुष्ट हो , इससे बढ़कर मुझे और क्या चाहिए ?मेरा आदर्श यही है। तुम्हारे होठों पर की हँसी देखने के लिए मैं ऐसी लाखों किताबें न्योछावर कर सकता हूँ। "

"गौराङ्ग ! तुम्हारे त्याग का वर्णन करना मेरे सामर्थ्य से बाहर की बात है। मैं तो इतना ही कर सकता हूँ कि तुम्हारे त्याग की महानता संसार भर में प्रगट कर दूँ। " गदाधर ने अपनी कृतज्ञता जताई ।

बहुत पुरानी बात है। किसी देश में एक शहर था। उस शहर में एक ब्राह्मण परिवार रहता था। ब्राह्मण की स्त्री और उसकी माँ में बिल्कुल नहीं बनती थी। सास और पतोहू हमेशा आपस में झगड़ती रहती थी। सास को पतोहू छोटी आँख न सुहाती थी। वह हमेशा उसे सताती रहती थी। उस ब्राह्मण के घर के पास एक बैंगन की बाड़ी थी। सास अक्सर बैंगन की तरकारी बनाती , लेकिन कभी अपनी पतोहू को नहीं देती थी। पतोहू को बैंगन की तरकारी बहुत पसन्द थी। लेकिन करती क्या ? सास का पहरा कभी हटता नहीं था।

आखिर 'बिल्ली के भाग्य से छीका टूटा'। एक दिन सास अपनी बेटी को देखने के लिए नजदीक के गाँव में गई। पतोहू ने सोचा - बस, यही मौका है। झट बाड़ी से बैंगन तोड़ लाई। जल्दी-जल्दी तरकारी बनाई और किवाड़ खिड़कियाँ सब बन्द करके खुशी-खुशी खाने बैठ गई। लेकिन तकदीर खोटी थी। उसी समय सास ने आकर किवाड़ खटखटाया। अब तो पतोहू की जान निकल गई। उसने झट भात तरकारी सब कुछ एक खाली घड़े में डाल दिया और हाथ धोकर किवाड़ खोलने गई। किवाड़ खुलते ही साथ अन्दर आ गई। पतोहू पानी लाने का बहाना करके घड़ा लेकर बाहर निकली। लेकिन बाहर भी कहीं उसे ऐसी जगह नहीं मिली जहाँ वह निश्चित होकर बैंगन की तरकारी खा सकती। आखिर बहुत सोच विचार कर वह पास के काली मंदिर में चली गई और एक अन्धेरे कोने में बैठकर खुशी-खुशी बैंगन की तरकारी उड़ाने लगी। काली माई को उसे औरत का यह हाल देखकर बड़ा अचरज हुआ और उन्होंने दाँतों तले ऊँगली दबा ली।

चाट पोंछकर खा लेने के बाद पतोहू उठी और घड़े में पानी भरकर घर जा पहुँची। दूसरे दिन काली के मन्दिर का पुजारी पूजा करने आया तो देखा क्या है की माँ दाँतों तले ऊँगली दबाए है। यह देखकर उसे बड़ा अचरज हुआ और तुरन्त राजा के पास जाकर सारी बात कह सुनाई। राजा ने यही बात दरबारियों से कही। सुनकर सब लोग सन्न हो गए। एक ने कहा -"जरूर इस राज पर कोई ना कोई भारी सङ्कट आने वाला है। नहीं तो काली माँ दाँतों तले ऊँगली क्यों दबाती ?" यह बात सुनकर राजा डर गया और ऊँगली हटाने के लिए बहुत से पूजा पाठ करवाया। लेकिन कोई फायदा न हुआ। तब राजा ने ढिँढोरा पिटवा दिया कि जो कोई वह ऊँगली हटा देगा उसे बहुत बड़ा इनाम दिया जाएगा। बहुत लोगों ने वह इनाम पाने की कोशिश की। लेकिन कोई न पा सका।

पतोहू ने कहा -"मैं यह इनाम लूँगी। वह घड़ा लेकर निकली और सीधे मन्दिर में जाकर काली माँ से कहने लगी-" काली माई, तुम तो सब की माँ कहलाती हो। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि कुछ बहू को सास से छुपा कर कभी-कभी कुछ खा लेने का मन होता है। क्या इतनी सी बात के लिए तुम सबके आगे मुझे नीचा दिखाना चाहती हो ? हटा लो यह ऊँगली। नहीं तो यह घड़ा तुम्हारे सर पर पटक दूँगी। " उसकी ऐसी बातें सुनकर काली माई भी डर गई और उन्होंने तुरन्त ही दाँतों तले से ऊँगली हटा ली। यह खबर बिजली की तरह सारे नगर में फैल गई। सब लोग पतोहू की तारीफ करने लगे ।

ज्यों ही राजा को यह खबर मिली उसने पतोहू को आदर के साथ बुलाया और बहुत

सा सोना चाँदी, हीरे-जवाहरात आदि उसे भेंट किया। पताहु यह सब लेकर फूली फूली घर पहुँची। अब सास उसे देखकर मन ही मन जलने लगी। लेकिन बाहर से वह कुछ बोल नहीं सकती थी। क्योंकि आसपास के लोग सब पतोहू को करीब करीब एक देवी समझने लग गए थे। लोग आपस में कहने लगे- "इसका हुक्म तो काली माई भी नहीं टालती है। तब हम इसी की पूजा क्यों ना करें ?" इस तरह अब उसे देखने के लिए बहुत दूर-दूर के लोग आने और तरह-तरह की भेंट लाने लगे। यह सब देखकर सास मन में और भी जलने लगी। जब उसे कोई उपाय न सूझा तो उसने अपने बेटे के कान भरना शुरू कर दिया -"देख बेटा, तेरी औरत जरूर कोई चुड़ैल है। नहीं तो काली माँ भी इसे क्यों डर जाती। हमको अपने बचाव के वास्ते कोई उपाय सोचना चाहिए। नहीं तो यह एक-न-एक दिन जरूर हम दोनों को खा जाएगी। अच्छा हो अगर पहले ही हम इसे अपना पिण्ड छुड़ा ले।"

रोज ऐसी बातें सुनते-सुनते बेटे का मन भी बदल गया। उसने एक दिन

अपनी माँ से पूछा -"अच्छा, तुम ही बताओ इस चुड़ैल से बचने का क्या उपाय है। "

माँ एक उपाय सोचा और बेटे के कान में कह दिया। सुनकर बेटा तैयार हो गया।

एक रात माँ बेटे दोनों ने मिलकर सोई हुई पतोहू के मुँह में कपड़ा ठूस दिया। फिर उसे एक चटाई में लपेटकर रस्सी से बाँध दिया और उठाकर मरघट में ले गए। वहाँ उन्होंने सुखी लकड़ियाँ जमा करके एक चिता बनाई और फिर चटाई

में लिपटी हुई पतोहू को उस पर लिटा दिया। लेकिन आग लगाने के लिए दियासलाई ढूँढने लगे तो मालूम हुआ कि दियासलाई घर पर ही भूल आए हैं। सास ने कहा -"बेटा, तुम यहीं रहो। मैं अभी घर से दियासलाई ले आती हूँ। इस पर बेटे ने कहा -"माँ , तुम ही यहाँ रहो। मैं जा कर दियासलाई ले आता हूँ। लेकिन माँ क्या बेटे से कम होशियार थी ? दोनों दियासलाई लाना चाहते थे और कोई वहाँ रहने को तैयार न था। आखिर यह तय हुआ कि दोनों साथ-साथ घर जाकर दियासलाई ले आएँ। बस, पतोहू को वहीं छोड़कर दोनों घर लौट आए।

अब पतोहू ने धीरे-धीरे अपने सारे बन्धन ढीले किए। आखिर किसी न किसी तरह रस्सी की गाँठे खुली और वह चिता पर से नीचे उतरी। पास ही लकड़ी का एक कुण्डा पड़ा था। उसने उसे चटाई में लपेटकर इस तरह बाँध दिया। उस मरघट के एक कोने में एक बड़ा पेड़ था। पतोहू इस पर चढ़ गई और पत्तों की आड़ में छिपकर बैठ गई।

कुछ ही देर में उसके पति और सास दोनों दियासलाई लेकर लौटे। चिता पर चटाई ज्यों की क्यों पड़ी थी। उन्होंने झट उसमें आग लगा दी।

लकड़ी का कुण्डा जल उठा। उन्होंने समझा -डायन जलकर खाक हो गई और खुशी-खुशी घर लौट गए।

थोड़ी देर बाद जिस पेड़ पर पतोह छिपी बैठी थी, उसके नीचे कुछ चोर जमा हो गए। वह किसी धनवान के घर से अच्छे-अच्छे गहने चुरा लाए थे और उस पेड़ के नीचे बैठकर बँटवारा कर रहे थे। पतोहू उस समय पेड़ की डाल पर बैठी ऊँघ रही थी।

अचानक उसके हाथ से डाल छूट गई और वह धड़ाम से नीचे आ गिरी। उसे देखकर चोरों ने समझा कि कोई भूत है। बस ,वह गहने बगैरह वहीं छोड़ जान लेकर भाग खड़े हुए। पतोहू ने एक-एक करके सब गहने पहन लिए और अपने घर की राह ली। घर पहुँच कर उसने किवाड़ खटखटाया। सास ने डरते डरते दरवाजा खोला। सोने-जवाहर से लदी हुई अपनी

पतोहू को देखकर उसने समझा कि वह भूत बनकर लौट आई है। चिल्लाती हुई वह अन्दर भागी और गिरती पड़ती जाकर अपने बेटे को जगाया। वह हड़बड़ा कर उठा और पूछने लगा-"क्या बात है ?"

माँ ने सिसक कर कहा -"अरे, बहु भूत बनकर लौट आई है। " बेटे को विश्वास न हुआ। माँ ने फिर कहा -"तुमको विश्वास ना हो तो बाहर जाकर देख लो न अपनी आंखों से।" आखिर दोनों डरते डरते बाहर निकले। देखा, सचमुच वही सजी-धजी खड़ी थी। दोनों उल्टे पैर अन्दर भागे तो हँस कर पतोहू ने कहा -"डरिए मत ! मैं भूत नहीं हूँ। मैं आपकी वही बहू हूँ। जब आप लोगों ने मुझे चिता में डाल दिया तो मैं सीधे स्वर्ग चली गई। वहाँ ससुर जी से भेंट हुई। वह मुझे देखकर बहुत खुश हुए और आप सबका कुशल समाचार पूछा। मैंने उन्हें आप सब का हाल सुना दिया। तब उन्होंने कहा -अच्छा , अब तुम घर लौट जाओ और अपनी सास को मेरी खबर पहुँचा दो। कह देना ससुर जी कुशल से हैं और तुम्हारी राह देख रहे हैं। जब मैं स्वर्ग से लौटने लगी तो उन्होंने यह सब गहने मुझे भेंट कर दिए।" यह कहकर वह एक-एक करके अपने गहने दिखाने और सास को ललचाने लगी।

उन रङ्ग-बिरङ्गे जग-जग करते गहनों को देखकर सास के मन में भारी उथल-पुथल मच गई। वह सोचने लगी- "यह चुड़ैल मेरे सब गहने ले आई। देखो तो इसका भाग्य। मैं जाती तो मुझे ही मिलते न यह गहने। लेकिन यह तो कहती है कि उनके पास ढेर के ढेर गहने हैं। तो मैं देर क्यों करूँ ? क्यों न जल्दी जाकर सब बटोर लाऊँ ?"

ऐसा निश्चय करके उसने कहा -"ओरी बहू, मेरा जी तुम्हारे ससुर जी को देखने के लिए तड़प रहा है। बेचारे अकेले स्वर्ग में कितना कष्ट उठाते होंगे। अच्छा तो यही होगा बेटा अगर तुम मुझे भी उसी तरह चटाई में लपेटकर चिता में रख दो। मैं तुम्हारे पिताजी को देखकर जल्दी ही लौट आऊँगी । बेटा भी माँ से कम होशियार न था। वह झट राजी हो गया।

आँखों में आँसू भर और स्वर्ग जाती सास के चरणों को छूकर पतोहू बोली

"सास जी ! स्वर्ग में जाकर कहीं भूल न जाइएगा। जल्दी वापस आइएगा। नहीं तो रो-रो कर हम मर जाएँगे। आपके बगैर यह घर हमें काटने लगेगा। यह गहने मार बन जाएँगे।"

बहू का यह प्रेम देखकर सास जी गदगद हो उठी। वह कुछ कहना ही चाहती थी कि बहू बीच में बोल उठी - "सास जी , जो एक बार स्वर्ग पहुँच जाता है वह लौट आना नहीं चाहता। इसी से हमें डर होता है कि कहीं आप भी वहाँ जाकर हमें भूल न जाएँ। "

बहू की बातों से सांस बिह्वल हो गई। सचमुच उसे भी आँसू आ गए। बहू के सिर पर हाथ रखकर उसने आशीष दिया -"बहू, मैं वहाँ ज्यादा दिन नहीं रहूँगी। हाँ , इन बैंगनों का ख्याल रखना। बहू, मेरे आने तक तोड़ना नहीं। अच्छा बहू , एक बात तो कहो। क्या स्वर्ग में बैंगन मिलते हैं ?"

बहू ने मुँह बिचका कर कहा -"नहीं सास जी , बैंगन वहाँ नहीं मिलते। इसी से तो मैं आपको वहाँ जाने नहीं देना चाहती। मैं ही चली जाऊँगी। आप यही रहिए सास जी।

सास जी के पेट में खलबली मच गई- "अरे, यह तो बाकी कहने भी ले आना चाहती है।"

वह झट कहने लगी -"नहीं बहू, मैं वहां रहने थोड़ी ही जाती हूँ! बात असल यह है कि मुझे तुम्हारे ससुर जी को देखना है। बहुत दिन हो गए हैं। अब पति-पत्नी दोनों ने मिलकर सास को चटाई में लपेट दिया फिर सावधानी से मरघट में ले गए और चीता पर रख स्वर्ग भेज दिया। इस बार दिया सलाई लाना कोई न भूला था।

बेटे ने बहुत दिन दिनों तक माँ के वापस आने की राह देखी। लेकिन जब महीनों बीत गए और वह लौट कर नहीं आई तो, उसने इन्तज़ार करना छोड़ दिया और उसे धीरे-धीरे भुला दिया। उसकी स्त्री तो जानती ही थी कि वह कभी लौटने वाली नहीं। अब वह रोज बैंगन की तरकारी बनाती है और गा-गा कर खाती है।

एक गाँव में एक गरीब ब्राह्मण रहता था। वह बड़ी मुश्किल से अपने दिन काट रहा था। उसे साग और सत्तू के सिवा कभी और कुछ खाने को नसीब न होता था। एक दिन उस ब्राह्मण और उसकी स्त्री के मन में जौ की रोटी खाने की इच्छा हुई। लेकिन उन्हें अपनी इच्छा पूरी करने की कोई सूरत न दिखती थी। तब ब्राह्मण ने नजदीक के एक बन में जाकर कुछ दिन तक घोर तप किया। आखिर भगवान का मन पिघला और उन्होंने ब्राह्मण को दर्शन देकर पूछा -"बोलो, तुम क्या चाहते हो?"

"भगवन ! बहुत दिनों से मेरा मन जौ की रोटियाँ खाने का हो रहा है। आप ऐसा कोई वर दीजिए जिससे मुझे खूब जौ की रोटियाँ खाने को मिले।" ब्राह्मण ने कहा।

"अच्छा, तुम जाओ। किसी से जौ का एक दाना माँग लेना। फिर तुम्हें जितनी रोटियाँ चाहे मिल जाएगी।" भगवान यह वर देकर अन्तर्धान हो गए।

ब्राह्मण खुशी-खुशी अपने गाँव पहुँचा। पहले उसने एक बनिए की दुकान पर जौ का एक दाना माँग लिया और फिर घर का रास्ता लिया। चलते-चलते ब्राह्मण के हाथ का दाना एक से दो बन गया। फिर तीन और चार। यहाँ तक की घर पहुँचते पहुँचते उसके कन्धे पर पहुँचते का एक बोरा रखा था।

घर जाकर ब्राह्मण ने अपने कन्धे पर का बोरा उतार कर नीचे डाला भी न था कि न जाने कहीं से और एक बोरा उसके कन्धे पर आ गया। वह भी उतार कर नीचे रखा तो कन्धे पर एक और था। उसके बाद तीसरा, चौथा

फिर पाँचवाँ ....ब्राह्मण बोरा उतरता गया। लेकिन उसके कन्धे पर का बोरा ज्यों-का-त्यों बना रहा। यहाँ तक की बोरा उतार कर रखते रखते वह थक गया और हाँपने लगा। आखिर वह एक दीवार से टिककर खड़ा हो गया।

इतने में ब्राह्मणी वहाँ आई और बोरे देखकर फूली न समाई। उसने जल्दी से एक बोरा खोल कर थोड़ा सा जौ निकाल लिया और उन्हें चक्की में डालकर पीसने लगी। पीसने के बाद जब उसने आटा निकाल लिया तो देखा कि चक्की में आटा और जौ ज्यों-का-त्यों है। उसने फिर पीसा और आटा निकाल लिया। लेकिन चक्की ज्यों-का-त्यों भरी रही। आखिर जब पिसते पिसते वह थक गई और अब न पीस सकी तो चक्की वहीं छोड़कर थोड़ा सा आटा लेकर गूँथने लगी। लेकिन यहाँ भी वही हाल हुआ। वह गूँथती-गूँथती थक गई। लेकिन आटा ज्यों-का-त्यों मौजूद था। आखिर वह थोड़ा सा गुथा हुआ आटा लेकर बेलने लगी। लेकिन फिर वही हाल हुआ। बेलते-बेलते वह थक गई , पर आटा वैसा ही बना रहा। आखिर वह तवे पर एक रोटी सेकने लगी। जब रोटी अच्छी तरह फूल गई तो उसने तवे से निकाल ली। लेकिन देखा कि और एक रोटी तवे पर है। वह रोटी निकालते निकालते थक गई लेकिन तवे पर की रोटी वैसी ही बनी रही। गूँथा हुआ आता वैसा ही पड़ा हुआ था। चक्की में के जौ वैसे ही पड़े थे। ब्राह्मण के कन्धे पर बोरा वैसा ही मौजूद था।

इतने में एक पड़ोसी बुढ़िया आग माँगने आई। उसे उस घर का हाल देखकर

बड़ा अचरज हुआ। इतने में उसे रोटियों की ढेर दिखाई दी। देखते ही वह ललचा गई। उसने एक रोटी हाथ में लेकर एक टुकड़ा तोड़ा और मुँह में डाल लिया। बस, अब क्या था ! बुढ़िया चबा-चबा कर निगलती गई ,पर मुँह में रखा टुकड़ा ज्यों-का-त्यों बना रहा। चबाते-चबाते उसका मुँह दुखने लगा। खाते-खाते उसका पेट फूलने लगा, पर मुँह में रखा टुकड़ा वैसा ही बना रहा। आखिर बुढ़िया बेदम होकर दीवार से टिककर बैठ गई और ब्राह्मण को कोसने लगी -"मैं नहीं जानती थी कि यह ऐसा भुतहा घर है। मैं तो आग माँगने आई थी। न जाने यह कौन सी बाला मेरे सर पड़ गई। अभागा कहीं का! भाड़ में जाए तेरी रोटी। " बुढ़िया ने कहा।

"खूब बोली बुढ़िया ! पर मैं किसको कोसूँ ? मैं किसके आगे अपना दुखड़ा रोऊँ ? मैं यह बोरा उठाए-उठाए मरा जा रहा हूँ। लेकिन उतार नहीं सकता। है भगवान ! अब मेरा रोटी का शौक पूरा हो गया। अब कभी ऐसा वर न माँगूँगा।" यह कहते कहते ब्राह्मण की आँखों में आँसू आ गए।

ब्राह्मण का यह कहना था कि सभी कुछ जहाँ का तहाँ गायब हो गया। उसके कन्धे पर का बोरा गायब । चक्की मै से जौ नदारद। गूँथा हुआ आटा छूमन्तर ! तवे पर की रोटी न जाने कहाँ उड़ गई। बुढ़िया के मुँह में से रोटी का टुकड़ा काफूर हो गया। बस ब्राह्मण जो जौ का दाना माँग लाया था, वही बच गया। उसने भगवान का नाम लिया और सुख की साँस ली।

बुढ़िया कुछ बड़बड़ाती हुई अपने घर चली गई।

किसी समय एक गुरु के पास एक भोला भाला चेला पढता था। गुरु के मुँह से जो कुछ निकलता था , वह उसको बिना सोचे समझे सब सच मान लेता था।

एक दिन गुरु जी ने सबको पढ़ाया - "सर्वम खल्विदं ब्रम्हाम। सारा संसार ब्रह्ममय है। मुझ में, तुझ में, ईंट पत्थर में, पेड़ पौधों में, कीड़े मकोड़े में, हर जगह हर चीज में ब्रह्म है। "

चेले के मन में यह बात बैठ गई।

दूसरे दिन जब चेला बाहर चला तो देखा कि सामने से राजा का हाथी बेहताशा दौड़ा आ रहा है और लोग डर के मारे भाग कर घरों में छिप रहे हैं। महावत हाथी पर से चिल्ला चिल्ला कर कह रहा है कि -"हटो, भागो , यह हाथी पगला गया है। "

लेकिन चेले ने महावत की बात पर कान न दिया और हाथी के सामने चला गया। उसने सोचा -"मुझ में भी ब्रह्म है और इस हाथी में भी। ऐसी हालत में ये हाथी मेरा क्या बिगाड़ सकता है?"

लेकिन नजदीक आते ही हाथी ने उसे सूँड से उठाकर नीचे दे पटका। बस , बेचारे केले की कमर टूट गई। किसी तरह कराहते हुए गुरु जी के पास गया और सारा हाल सुना कर पूछा -"आपने कहा था कि हर चीज में ब्रह्म है, तब हाथी ने मुझे क्यों दे पटका ?"

गुरु जी ने जवाब दिया -अरे पगले! जब हाथी में ब्रह्म है तो क्या महावत में नहीं है ? तूने महावत की बात क्यों न मानी ?"

चेला यह जवाब सुनकर लजा गया। अब उसकी समझ में आ गया कि दूसरों की बातों पर बिना सोचे समझे विश्वास नहीं करना चाहिए। जरा अपने दिमाग से भी काम लेना चाहिए।

मदनलाल

एक गाँव में छलियाराम नाम का एक बड़ा धूर्त ठग रहता था। नजदीक ही के एक दूसरे गाँव में एक और ठग रहता था जिसका नाम था कपटीराम। दोनों लोगों को ठगने में एक दूसरे से बढ़कर थे।

संयोगवश यह दोनों एक दिन किसी तरह मिले। इसके पहले इन दोनों में कोई जान-पहचान न थी। लेकिन एक ही थैली के चट्टे-बट्टे थे न! इसलिए मिलते ही दोनों एक दूसरे को बड़े प्रेम से 'मामा' कहने लगे। लेकिन असल बात तो यह थी कि दोनों अपने मन में एक दूसरे को धोखा देने की सोच रहे थे। छलियाराम ने कपटीराम को न्योता देते हुए कहा -"आज रात हमारे यहाँ तुम्हारी दावत है। जरूर आना। "

छलियाराम ने उसे रात को अपने घर अच्छे-अच्छे पकवान बनवाई और कहीं से चुरा कर लाई हुई एक सोने की थाली में मेहमान के लिए खाना परोसवाया। खाना खाते-खाते कपटीराम ने जो थाली की ओर देखा तो उसकी आँखें चौन्धिया गई। उसने तुरन्त मन में ठान लिया कि किसी न किसी तरह इस थाली को उड़ाना ही चाहिए। इधर छलिया क्या कुछ काम था ? वह मेहमान को जबरदस्ती ठूँस-ठूँस कर खिला रहा था ताकि उसे खाना खाते ही गहरी नीन्द आ जाए और वह आसानी से उसकी जेब मार ले।

कपटीराम खाना खाने के बाद नीन्द का बहाना करके लेटा रहा। छलियाराम ने सोचा -बस, यही मौका है। उठकर कपटी राम की कमर में हाथ डालकर टटोला; पर रुपए की थैली का कहीं पता न चला। बेचारा हार गया और जाकर सो गया।

उसके सोते ही कपटीराम उठा और सन्दूक का ताला तोड़कर सोने की थाली

निकाल ली। फिर उसे अपने तकिए के नीचे रखकर आराम से सो गया। थोड़ी देर में छलियाराम की आँख अचानक खुल गई तो उसकी नजर सबसे पहले सन्दूक पर पड़ी। टूटा ताला देखते ही वह सब कुछ ताड़ गया। वह दबे पाँव उठा और कपटीराम के बिस्तर के नीचे टोटल कर देखने लगा। आखिर उसे तकिए के नीचे अपनी सोने की थाली मिली। उसने धीरे-धीरे बड़ी सफाई से थाली निकाल ली। फिर उसे एक छीके पर रखकर उसमें पानी भर दिया और अपनी चारपाई उस छीके के नीचे डालकर सो गया। बेचारे ने सोचा -"अगर कोई थाली पर हाथ लगाएगा तो पानी मुझ पर छलकेगा और मैं जाग जाऊँगा। "

कपटी आँख बचाकर यह सब कुछ देख रहा था क्योंकि वास्तव में वह सोया तो था नहीं !उसने छलियाराम को सो जाने दिया। फिर उठकर चूल्हे में से थोड़ी राख उठा लाया और धीरे-धीरे पानी में डालने लगा। बस थोड़ी ही देर में राख ने सारा पानी सोख लिया। अब बिना किसी दिक्कत के उसने थाली नीचे उतार दी और नजदीक के एक तालाब में छिपा दी। फिर जाकर चुपचाप ऐसे सो गया जैसे कुछ जानता ही न हो।

इतने में छलियाराम जागा और आँख खोलते ही छीके की ओर देखा तो थाली गायब ! लेकिन वह भी कोई उल्लू का पट्ठा तो था नहीं। उठकर तुरन्त कपटीराम की चारपाई के पास गया और उसकी और गौर से देखने लगा। उसे कपटीराम के तलवों में कीचड़ लगा हुआ दिखाई दिया। वह तुरन्त भाँप गया कि हो ना हो जरूर यह मेरी थाली तालाब में छुपाया है। वह धीरे-धीरे उसकी चारपाई के पास घुटनों के बल बैठ गया और पैर चाटने लगा, जिससे

मालूम हो की वह पानी में कितनी गहराई तक पैठा है। क्योंकि वह जानता था कि उसके पैर पानी में जिस गहराई तक धँसे होंगे वहाँ तक चाटने में फीके लगेंगे और उसके बाद नमकीन। कपटीराम के पैर घुटनों तक फीके लगे। इससे छलियाराम ने जान लिया कि वह घुटनों तक पानी में पैठा है। वह तुरन्त दौड़ता हुआ तालाब की ओर गया और घुटनों तक की गहराई में इधर-उधर खोजने लगा। जल्दी ही उसकी मेहनत फली और वह थाली लिए खुशी-खुशी घर लौटा।

इसी बीच कपटीराम की आँखें खुली तो देखा क्या है कि छलियाराम का बिस्तर खाली है। वह समझ गया कि जरूर वह थाली की खोज में गया होगा। उसने सोचा -"यह तो बड़ा गुरु-घण्टाल मालूम होता है। भला तो इसी में है कि दुश्मनी छोड़कर मैं इसे अपना साझेदार बना लूँ। "

छलिया राम दरवाजे पर आया तो कपटी उसके सामने जाकर बोला - " मामा ! अब तक मैं तुमको बेवक़ूफ़ समझे हुए था, लेकिन तुम तो बड़े घाघ निकले। आओ, आज से हम दोनों दोस्ती कर लें। आगे से हम दोनों साझे पर कम करें तो

खूब लाभ होगा। जो कुछ मिलेगा दोनों आधा-आधा बाँट लेंगे। इस बात पर छलियाराम भी राजी हो गया।

एक दिन एक शुभ घड़ी में यह दोनों दोस्त चोरी करने चले। राह में कपटी ने छलिया से कहा -"देखो ! मामा ! मैंने सुना है कि हमारे गाँव का लाला दयाराम मर गया है। हम लाला के भाई और उसकी स्त्री के पास जाकर कहेंगे कि लाल जी ने हमसे हज़ार रुपया उधार लिया था और चुकाया नहीं था। वह तो अचानक मर गए। इसीलिए अब आप हमारा रुपया चुका दीजिए। लेकिन इसमें एक दिक्कत है। वह लोग जब

पूछेंगे कि तुम्हारी बात का सबूत क्या है तो हम क्या जवाब देंगे ?"

"वह जवाब भी तुम ही सोच निकालो न !" छलियाराम ने कहा।

"अच्छा, तो सुनो। जहाँ लाला जी की चिता जलाई गई था, वहीँ एक गड्ढा खोदकर मैं तुम्हें गाढ़ दूँगा। डरो नहीं , साँस लेने के लिए एक और एक छोटा सा छेद छोड़ूँगा। फिर मैं लाल जी के भाई और स्त्री के पास जाकर रुपया माँगूगा। और जब सबूत चाहेंगे तो कहूँगा - "आइए , जहाँ लाला जी जला दिए गए हैं वहाँ जाकर मैं पुकारता हूँ । अगर वह हामी भर देंगे तो आप मेरा रुपया दीजिएगा; नहीं तो नहीं। हाँ , अब मैं उन्हें यहाँ ले आऊँगा और लाला जी का नाम लेकर पुकारूँगा तो तुम्हें जवाब देना होगा। मैं तुमसे पूछूँगा कि तुमने मुझे हज़ार रुपये उधार लिया था कि नहीं। तब तुम हामी भर देना। अगर हमारी चाल चल गई तो दोनों आधा-आधा बाँट लेंगे। " कपटीराम ने कहा।

छलिया राजी हो गया। दोनों अपनी होशियारी पर फूले न समाए। कपटी ने गड्ढा खोदा और छलिया को उसमें छुपा कर लाला जी के घर गया। जो सोचा था वही हुआ। लाला जी के भाई ने कहा कि बिना किसी सबूत के हम रुपया नहीं चुका सकते। तब कपटी उनको मरघट में ले आया और लाला जी का नाम लेकर पुकारने लगा। "क्यों, क्या काम है ?" छलियाराम ने गड्ढे के अन्दर से पूछा। "क्यों लाला जी ! आपने मुझे हज़ार रुपये उधार लिया था कि नहीं ?" कपटीराम ने पूछा। "हाँ , हाँ , लिया क्यों नहीं था।" छलियाराम ने गड्ढे के अन्दर से जवाब दिया। बेचारे लाला जी के भाई ने समझा सचमुच लाला जी ही जवाब दे रहे हैं। उसने कपटी राम को घर ले जाकर एक हज़ार गिन दिया।

कपटीराम लौटकर फिर वहाँ आया जहाँ जमीन के अन्दर छलियाराम उसकी राह देख रहा था। उसने एक बड़ा पत्थर उठाकर गड्ढे के मुँह पर रख दिया जिससे वह आसानी से बाहर न निकल सके। फिर रुपए की थैली उठाकर नौ-दो-ग्यारह हो गया। भीतर से बेचारा छलियाराम 'मामा' 'मामा' पुकारता ही रहा। लेकिन वहाँ था कौन ?उसका मामा तब तक आधा मील चला गया था।

छलियाराम समझ गया कि उसने धोखा खाया है। बड़ी मुश्किल से उसने एक और छेद किया और अधमरा सा गड्ढे से बाहर आया। उसने तय कर लिया कि किसी न किसी तरह जरूर उसका बदला लेना चाहिए।

गाँव के बाहर जाने के लिए उस मरघट से होकर एक ही राह थी। छलियाराम अपने कपटी मामा को खोजता उसी राह से चला।

हज़ार की थैली बहुत दूर तक अकेले ढो ले पाना आसान काम नहीं था। इसीलिए कपटीराम ने एक बैल भाड़े पर लिया। रुपए की थैली उस पर लाद कर खुशी-खुशी चला।

छलियाराम ने बहुत दूर से कपटीराम को देख लिया। वह सोचने लगा -किस सूरत से इसे मजा चखाया जाय ? इतने में उसे एक घर के बाहर बरामदे में एक जोड़ा चप्पल रखा हुआ दिखाई दिया। उसने जल्दी से उसे उठा लिया और बेहताशा दौड़ता हुआ कपटीराम से भी आगे निकल गया। आगे जाकर उसने एक चप्पल रास्ते में गिरा दिया। फिर वहाँ से थोड़ी दूर और आगे जाकर उसने दूसरा चप्पल भी गिरा दिया और खुद पास यह खेत में छिपकर तमाशा देखने लगा। चन्द मिनट में कपटीराम बैल को हाँकता वहाँ आया तो उसकी नजर उस चप्पल पर पड़ी। चप्पल नया था। लेकिन उसने

सोचा- "एक चप्पल लेकर क्या करूँगा?" यह सोचकर उसने उस चप्पल को छुआ तक नहीं। लेकिन थोड़ी दूर जाने पर उसे दूसरा चप्पल भी दिखाई दिया। तब वह पछताने लगा -"अरे ! मुझे वह चप्पल उठा लेना चाहिए था। लेकिन मैंने सोचा एक चप्पल उठाकर क्या करूँ? अच्छा, अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। बैल को इस पेड़ से बाँध दूँगा और दौड़कर दूसरा चप्पल उठा लाऊँगा। यह सोचकर उसने बैल को पेड़ से बाँध दिया। वह जगह बिल्कुल सुनसान थी और रुपए की थैली भी भारी थी। इसलिए उसने उसे बैल की पीठ पर ही छोड़ दिया और दूसरा चप्पल लाने पीछे दौड़ा।

उसके आँखों की ओट होते ही छलियाराम बाहर निकल आया और जल्दी-जल्दी बैल को भगा ले गया। थोड़ी दूर ले जाकर उसने बैल को छोड़ दिया। रुपए की थैली लेकर एक पुआल की ढेरी में छिप रहा।

कपटीराम जब लौटा तो बैल लापता था। वह समझ गया कि हो ना हो यह छलियाराम की चालबाजी है। उसके शिवा और कोई यह काम नहीं कर सकता। वह इधर-उधर ढूँढ़ते हुए उसी राह में चला गया। राह में जब उसे पुआल की ढेरी दिखाई दी तो उसने सोचा -"आसपास में तो यह पुआल की ढेरी के सिवा छिपाने लायक कोई जगह नहीं है। अगर वह छुपा होगा तो इसी में ।" यह सोचकर वह पुआल की ढेरी को उलटने पुलटने लगा। जब छलियाराम ने देखा कि उसका भाण्डा फूटने पर ही है और वह किसी तरह भाग नहीं सकता तो खुद बाहर निकल आया।

उसे देखकर कपटीराम ने कहा - "देखो ! हम आपस में बेकार क्यों परेशान हों ? आओ, यह रुपया आधा-आधा बाँट लें। इस पर छलियाराम भी राजी हो गया। दोनों वह रुपया आपस में बाँटकर खुशी-खुशी घर चले गए।

उन बौनों को वर्धमान एक पहाड़ सा दीख पड़ता था। इसलिए उसका नाम उन्होंने "मानवी पर्वत" रखा। उसे देखने को बहुत से लोग उस मन्दिर के सामने की सड़कों पर कतारें बाँधकर खड़े हो गए। उस मन्दिर के सामने ही किले की एक बड़ी ऊँची मीनार थी। उस देश के राजा, रानी और कुछ चुने हुए दरबारी उस मीनार पर चढ़कर तमाशा देख रहे थे।

वर्धमान रेंगता हुआ उस मन्दिर के अन्दर चला गया। उसने चारों ओर नजर दौड़ा कर देख लिया कि उसके रहने की जगह कैसी है। फिर वह बाहर आया और सीधा तन कर खड़ा हो गया। खड़े होने पर वह देश उसे खिलौनों सा दीख पड़ा। दूर पर जङ्गल नजर आते थे जिनमें ऊँचे से ऊँचे पेड़ भी सात फुट से ज्यादा न थे। दूसरी ओर शहर बसा हुआ था जो घरौंदों सा मालूम होता था।

राजा वर्धमान से बातें करने के लिए मीनार से उतरा और घोड़े पर सवार होकर उसके नजदीक आया। वर्धमान की लम्बाई-चौड़ाई देखकर राजा साहब का घोड़ा भड़क गया। लेकिन राजा अच्छा घुड़सवार था। इसलिए गिरते गिरते सम्भल गया। सिपाहियों की मदद से वह नीचे उतरा और पैदल ही वर्धमान के सामने आकर खड़ा हो गया। राजा की सुविधा के लिए वर्धमान जमीन पर लेट गया। राजा के हाथ में एक नन्ही सी तलवार थी। राजा के सिर पर जो मुकुट था वह वर्तमान की अँगूठी के बराबर था। उस मुकुट के हीरे जवाहरात जगमगा रहे थे।

राजा गला फाड़ फाड़ कर वर्धमान से कुछ कहने लगा जो वर्तमान की समझ में

न आया। वर्धमान बहुत सी भाषाएँ जानता था। उसने राजा से संस्कृत, प्राकृत, पाली और पैशाची बगैरह में प्रश्न किया। लेकिन न राजा इनमें से कोई भाषा जानता था और न उसके दरबारी पण्डित ही।

"यह हमारी बोली नहीं समझ सकता। लेकिन आदमी तो भला मालूम होता है। कौन कह सकता है कि यह आगे चलकर हमारे काम न आए। इसलिए इसके खाने-पीने का अच्छा इंतजाम करो और इसकी देखभाल करते रहो।" राजा ने अपने दरबारियों को हुक्म दिया और सपरिवार घर लौट गया। थोड़ी देर बाद सिपाही लोग अनगिनत गाड़ियों पर खाने-पीने की तरह-तरह की चीज लाद लाए और वर्धमान के सामने उतार दी। वर्धमान चार पाँच कौर में ही सब कुछ चट कर गया।

वर्धमान को देखने के लिए आने वालों की हमेशा भीड़ लगी रहती थी। उनमें से कुछ शरारती लोगों ने पहले वर्धमान को तीरों से मारा। सिपाहियों ने उन शरारतियों को पड़कर वर्धमान के हाथ सौंप दिया ताकि उन्हें अच्छी सजा मिल सके। वर्धमान ने उनको उठाकर अपनी जेब में डाल लिया। देखने वाले डर

से काँपने लगे कि कहीं वह उन्हें पैरों तले कुचलकर भुर्ता न बना दे। लेकिन कुछ देर उनसे अपना मन बहलाकर वर्धमान ने उन्हें हिफाजत से नीचे रख दिया। यह खबर जब राजा के दरबार में पहुँची तो सब लोग बहुत खुश हुए।

राजा ने वर्धमान के लिए एक बिस्तर बनवाने का हुक्म दिया। तुरन्त राज भर के सभी दरजी आ जुटे और अपना सिर खपाने लगे। कोई मामूली बात तो थी नहीं ! इसलिए कई लम्बे चौड़े प्रस्ताव पारित किए गए। आखिर छः छोटे-छोटे बिस्तर बनाए गए और गाड़ियों में लादकर मन्दिर के पास लाए गए। मन्दिर के अहाते में उन सबको

मिलाकर एक बड़ा बिस्तर बनाया गया। ऐसे पचास बिस्तर मिलाकर वर्धमान के लायक एक छोटा बिस्तर बना। मुलायम करने के लिए इसी तरह के चार बिछौने एक पर एक रखकर सी दिए गए। चादरें भी इसी तरह बनाई गई। उस देश की कई सौ चादरें जो वर्धमान की जेब-रुमाल से बड़ी न थी, मिलाकर सी दी गई और बिछाने के लिए एक चादर तैयार कर ली गई।

वर्धमान को बौनों की बोली सीखाने के लिए बड़े-बड़े पण्डित नियुक्त किए गए। उसके लिए देसी पोशाक बनाने का काम तीन सौ दर्जियों को सौंपा गया। उसके सामने रोज एक बार राजा साहब के घुड़सवारों की कबायद होने लगी जिससे घोड़े उसको देखकर भड़क न जाए।

इस "मानवी पर्वत" को देखने के लिए दूर-दूर के गाँव से लोग इस तरह आने लगे मानो कोई मेला लगा हो। मन्दिर के आसपास की सड़कों पर भीड़ के मारे पैर रखने तक की गुञ्जाइश न थी। वर्धमान की नाकों दम हो गया था। इसलिए उसको देखने के लिए पुर्जी निकाली गई। अब बिना पुर्जी के कोई उसे देख न सकता था। इस तरह
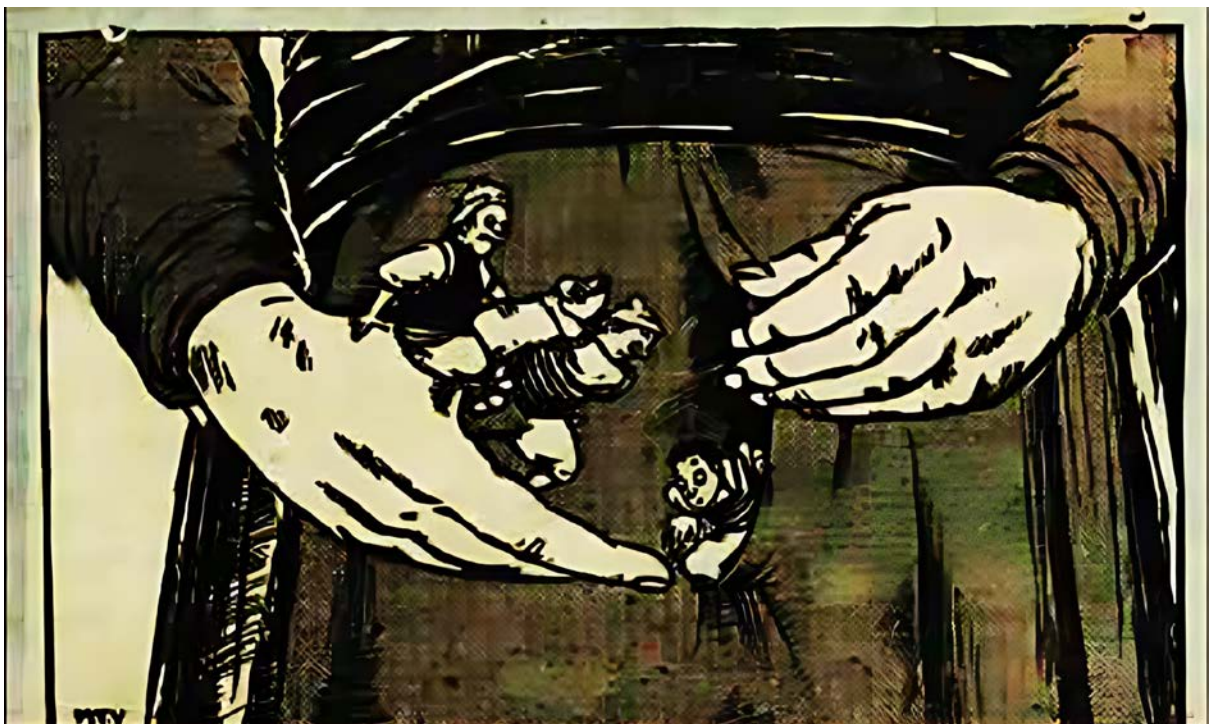
धीरे-धीरे भीड़ घटने लगी। नहीं तो शायद उसका खाना-पीना भी हराम हो जाता।

अब लोग उसे देखकर पहले की तरह डरते न थे। उसके पास आने में उन्हें अब खुशी होती थी। दस-पाँच लोग एक झुण्ड बनाकर आते और उसकी हथेलियों पर चढ़कर नाचते-गाते। बच्चे उसके लम्बे-लम्बे बालों में छिपकर आँख-मिचौली खेलते थे।

धीरे-धीरे वर्धमान उस देश की बोली समझने लगा। राजा अक्सर उसे देखने आता और उसके कन्धों या हाथों पर चढ़कर बातचीत करता। यह वर्धमान को सराहता कि वह उसके देशवासियों के साथ बहुत अच्छा सलूक कर रहा है। राजा को प्रसन्न देखकर वर्तमान कहता -"महाराज मुझे यहाँ सब तरह का आराम है। आपकी कृपा से किसी चीज की कमी नहीं है। किन्तु मेरी एक छोटी सी विनती है। अगर मेरे हाथ-पैर की हथकड़ी बेड़ियाँ भी काट दी जाए, तो बड़ा अच्छा हो। यह सुनकर राजा कहता _"अच्छा !अच्छा !धीरे-धीरे सब कुछ हो जाएगा।" और मुँह चुरा कर चला जाता।

इसकी एक वजह थी। राजा के दरबारियों में कुछ लोग ऐसे भी थे जिनकी

आँखों में वर्धमान काँटे सा खटक रहा था। वह सोचते थे कि ऐसा मजबूत आदमी अगर जिन्दा रहा तो कभी न कभी यह राज हड़प लगा। वर्धमान को भी कानों कान यह हाल मालूम हो गया। लेकिन उसने सोचा -"जब खुद राजा मेरा दोस्त है, तब यह लोग मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं ?" इसलिए दूसरे दिन जब राजा उससे मिलने आया, तो उसने फिर वही बात कही। राजा ने जवाब दिया -"मैं खुद यही चाहता हूँ। लेकिन मैं अकेला कुछ नहीं कर सकता। मेरे मन्त्री, मेरे दरबारी सभी लोग तुम्हारा नाम सुनते ही भड़क उठते हैं। जब उन्हें मालूम हो जाएगा कि तुमसे डरने की कोई जरूरत नहीं, तभी वह तुम्हारी रिहाई के लिए राजी होंगे। इसके लिए तुम्हारी तलाशी लेना जरूरी है। लेकिन मेरे सिपाही जबरदस्ती तो तुम्हारी तलाशी ले नहीं सकते। इसलिए बोलो, क्या तुमको तलाशी देना मञ्जूर है ?"

वर्धमान राजी हो गया। दो सिपाही उसकी तलाशी लेने आए। उसने उनको उठाकर अपनी सभी जेबों में घुमा दिया। तलाशी लेकर वे लोग राजा के पास गए और बोले - "महाराज ! मानवी पर्वत की जेबों में हमें बड़ी अजीब अजीब चीजें दिखाई दी। पहली जेब में हमें एक बहुत बड़ी कालीन दिखाई दी जो महाराज के सोने के कमरे में बिछाई जा सकती है। (यह वर्तमान की रुमाल थी।) उसी जेब में हमें सोने के बड़े-बड़े गोल मटोल पहिए दिखाई दिए। उन पहियों पर कुछ चित्र और अक्षर खुदे हुए थे। (ये अशर्फियाँ थी।) उसी जेब में हमें चाँदी का एक बड़ा सन्दूक दिखाई दिया। उसे जब खोल कर देखा तो उसमें मिट्टी की काली बारीक बुकनी भरी हुई थी। जब हमने उसमें उतर कर देखा तो मारे छींकों के हमारी नाक में दम हो गया।

(यह सुँघनी की डिबिया थी।) उसी जेब में हमें एक और चीज मिली जो देखने में एक सीढ़ी सी लगी। (यह एक कङ्घी थी।) उसकी कमर से कोई ऐसी चीज लटक रही थी जो देखने में एक जहाज के मस्तूल सी मालूम हुई। न जाने वह किस काम की है ! (यह तलवार की म्यान थी।)

राजा तीन हज़ार हथियारबन्द सिपाहियों के साथ इन चीजों पर कब्जा करने आया। वर्धमान ने अपनी सब चीज उसे दे दी और जब वह जाने लगा तब म्यान से तलवार निकाल कर उनको एक बार दिखा दी। तलवार की चमक से सिपाहियों की आँखें चौंधिया गई। जो लोग सबसे आगे थे, उनमें से कुछ बिल्कुल अन्धे हो गए। राजा ने तुरन्त तलवार म्यान में रखवा दी और उसे भी अपने कब्जे में कर लिया।

दो-तीन दिन बाद वर्धमान ने वामन भाषा में एक दरख्वास्त लिखी। उस दरख्वास्त में उसे छोड़ देने की विनीत प्रार्थना थी।

दरख्वास्त मञ्जूर तो हुई, लेकिन कुछ शर्तों के साथ ,वह शर्तें थी:

मानवी पर्वत को राजा का हुक्म लिए बगैर देश छोड़कर नहीं जाना होगा। अगर वह राजधानी में प्रवेश करना चाहे, तो दो घण्टे पहले ही सूचना दे ताकि लोगों का आना-जाना बन्द करके उसके लिए सड़के खाली रखी जाए। उसे खास बड़ी सड़कों पर ही चलना होगा। वह हरे भरे मैदान और खेतों में लोटपोट न सकेगा। उसे ख्याल रखना होगा कि कोई आदमी जानवर या किसी की जायदाद उसके पैरों तले न कुचली जाय।

जब दूसरे देशों से लड़ाई चलेगी तो उसे उस देश की ओर से लड़ना होगा। वर्धमान ने यह सब शर्तें मान ली। तब कहीं उसे छुटकारा मिला।

[संशेष]

CHANDAMAMA (Hindi) October '49 Regd. No. M. 5452

बगुला ध्यान लगाए बैठा !